"वेद" भारतीय संस्कृति के सनातन चक्षु हैं

वेद - शब्द की व्युत्पत्ति तैतरीय संहिता आपस्तम्ब धर्मसूत्र, मनुस्मृति, नाट्यशास्त्र एवं अमरकोश में बतलाई गई है - यह शब्द चार धातुओं से व्युत्पन्न होता है ।(१) विद्- ज्ञाने (२) **विद्-सत्तायाम् (३) विद्-लाभे (४) विद् = विचारणे - अर्थात् .. विदन्ति जानन्ति विन्ते भवन्ति, विन्दन्ते , लभन्ते, विन्दन्ति विचारयन्ति सर्वे मनुष्याः सत्यविद्याम् यैर्येषु वा तथा विद्वंसश्च भवन्ति ते वेदा** - इसका अर्थ हुआ - जिनसे सभी मनुष्य सत्य विद्या को जानते हैं, अथवा प्राप्त करते हैं - अथवा विचारते हैं - अथवा विद्वान होते हैं अथवा सत्यविद्या की प्राप्ति के लिये जिनमें प्रवृत्त होते हैं - उनको वेद कहते हैं - मनुस्मृति में वेदों को सर्वज्ञानमय कहा गया है ।

वेद शब्द का प्रयोग पूर्वकाल मे सम्पूर्ण वैदिक वागंमय के अर्थ में होता था जिसमें संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, और उपनिषद् सभी सम्मिलित थे - कहा गया है - मन्त्र ब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम् अर्थात् मन्त्र और ब्राह्मण का नाम वेद है - यहां ब्राह्मण में आरण्यक और उपनिषद् का भी समावेश है - किन्तु "वेद" शब्द केवल चार संहिताओं - ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद का ही द्योतक रह गया । ब्राह्मण- आरण्यक-और उपनिषद् वैदिक वांगमय का अंग होते हुए भी मूल वेदों से पृथक मान लिये गये । सामणाचार्य ने तैत्तरिय संहिता की भूमिका में इस तथ्य को स्पष्ट किया है - **" यद्यपि मंत्र ब्राह्मणात्मको वेदः तथापि ब्राह्मणस्य मंत्र व्याख्यान स्वरूपत्वाद् मन्त्रा एवादौ समाम्नाता :** । अर्थात - यद्यपि मंत्र और ब्राह्मण दोनों का नाम वेद है - किन्तु ब्राह्मणग्रन्थों के मन्त्र के व्याख्यान रूप होने के कारण आदि वेद मन्त्र ही हैं । .. इस वैदिक ज्ञान का साक्षात्कार, जैसाकि पहले कहा गया है ऋषियों को हुआ था - जिन व्यक्तियों ने अपने योग और तपोबल से इस ज्ञान को प्राप्त किया वे ऋषि कहलाये, इनमें पुरूष वर्गीय विद्वान एवं स्त्री वर्गीय विदुषी नारियां भी थीं । वैदिक ज्ञान जिन ऋचाओं अथवा वाक्यों द्वारा हुआ उनको मन्त्र कहतें हैं मन्त्र तीन प्रकार के हैं - १. ज्ञानार्थक २.विचारात्मक ३. सत्कारार्थक - इनकी व्युत्पत्ति इस प्रकार बताई गई है - .. दिवादिगण की मन् धातु (ज्ञानार्थप्रतिपादक)में ष्टन प्रत्यय लगाने से मन्त्र शब्द बनता है - जिसका अर्थ है -मन्यते (ज्ञायते) ईश्वरादेशः अनेने इतिमन्त्रः इससे ईश्वर के आदेश का ज्ञान होता है - इसलिये इसे मंत्र कहते हैं । तनादिगण की मन् धातु (विचारात्मक) से ष्टन प्रत्यय लगाने से भी मन्त्र शब्द बनता है

जिसका अर्थ - मन्यते (विचार्यते) इश्वरादेशो येन स मन्त्रः शब्द बनता है । वेदार्थ जानने के लिये इन व्युत्पत्तियों का जानना आवश्यक है ।

वेदों का वर्गीकरण दो प्रकार से किया गया है। त्रिविध और चतुर्विध पहले में सम्पूर्ण वेदमन्त्रों को तीन वर्गों में विभक्त किया गया है ।

१) ऋक २) यजुष ३) साम। इन्ही तीनों का नाम त्रयी है ।

१) ऋक का अर्थ है -प्रार्थना या स्तुति

२) यजुष का अर्थ है - यज्ञ यागादि का विधान

३) समा का अर्थ है- शान्ति अथवा मंगल स्थापित करने वाला गान ।वैदिक वचनों में इनके अतिरिक्त भी बहुत सामग्री थी जिसका सम्बन्ध धर्म दर्शन के अतिरिक्त लौकिक कृत्यों और अभिमारों (जादू टोना आदि) से था इन सबका समावेश अथर्ववेद में कर दिया गया। इस चतुर्विध विभाजन का उल्लेख वैदिक साहित्य में ही मिल जाता है अर्थववेद (१०-४-२०) के मंत्र के अनुसार :-

यस्मादृचो अयातक्षन यजुर्यस्मादपकषन् सा :
समानि यस्य लोमानि अथर्वाङ्गिरसोमुखम्
स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः ।।

चारो वेदों का सम्यक विभाजन और सम्पादन महर्षि वेदव्यास ने किया - यास्क ने निरूक्त (१-२०) और भास्कर भट्ट ने यजुर्वेद भाष्य की भूमिका में इसका उल्लेख किया है। भाष्यकार नही धर ने लिखा है - **तत्रादौ ब्रह्मपरम्परया प्राप्तं वेद वेदव्यासो मन्दतीन् मनुष्यान् विचिन्तय तत्कृपया चतुर्धा व्यस्य ऋग्यजुः सामाथर्वरव्यांश्चतुरो वेदान् पैल वैशम्पायन जैमिनी सुमन्तुभ्यः क्रमादुपदिदेश**

प्रत्येक वेद से जो वाङ्मय विकसित हुआ उसके चार भाग हैं -

१) संहिता २) ब्राह्मण ३) आरण्यक और ४) उपनिषद्

१) संहिता में वैदिक स्तुतियां संर्गहीत हैं

२) ब्राह्मण मे मन्त्रों की व्याख्या और उनके समर्थन में प्रवचन दिये हुए हैं

३)आरण्यक में वानप्रस्थियों के उपयोग के लिये आख्यगान और विधि विधान है ।

४) उपनिषदों में दार्शनिक व्याख्याएं प्रस्तुत की गयी हैं ।

वैदिक अध्ययन के फलस्वरूप उनकी कई शाखाएं विकसित हुई - जिनके नाम पर संहिताओं के नाम पड़े - इनमें से कालतुमसे अनेक संहितायें नष्ट हो गयीं - परन्तु कुछ अब भी उपलब्ध हैं -

१) ऋग्वेद - की पाँच शाखाएं थी - १. शाकल २. वाष्कल ३. आश्वलायन ४. शांखायन ५. माण्डूक्य इनमें अब शाकल शाखा ही उपलब्ध है ।

२) शुक्ल यजुर्वेद - की दो शाखाएं हैं -१) माध्यन्दिन २) काण्व माध्यन्दिन उत्तर भारत में एवं काव्य महाराष्ट्र में प्रचलित है ।

३) कृष्ण यजुर्वेद - की इस समय चार शाखाएं उपलब्ध हैं - १. तैत्तिरीय २.मैत्रायणी ३. काठक ४.कठ

४) सामवेद - की दो शाखाएं उपलब्ध हैं १. कौथुकी २.राणायनीय

५) अर्थववेद - की शाखाएं दो हैं - १. पैपपलाद २. शौनक वेद का चतुर्विध विभाजन प्रायः यज्ञ को ध्यान में रखकर किया गया था - यज्ञ के लिए चार ऋत्विजों की आवश्यकता होती है -

१.होता २.अह्वर्य ३. उद्गाता ४. ब्रह्मा

१. होता - होता का अर्थ है आव्हान करने वला - होता यज्ञ के अवसर पर विशिष्ट देवता के प्रशंसात्मक मन्त्रों का उच्चारण कर उस देवता को बुलाता है। ऐसे मन्त्रों का संग्रह जिस संहिता में है - उसका नाम -ऋग्वेद है ।

२.अध्वर्यु - का काम यज्ञ का सम्पादन है - उसके लिये आवश्यक मन्त्रों का संकलन जिस संहिता में है उसका नाम यजुर्वेद है ।

३. उद्गाता - का अर्थ है उच्च स्वर से गाने वाला। उसके उपयोग के लिए मन्त्रों का संग्रह जिस संहिता में है उसका नाम सामवेद है ।

४. ब्रह्मा - का काम अध्यक्ष पद् से सम्पूर्ण यज्ञ का निरीक्षण करना है - वह चारों वेदों का ज्ञाता होता है ।

शतपथ ब्राह्मण - में लिखा है कि -अग्नि से ऋग्वेद वायु से यजुर्वेद, सूर्य से सामवेद प्राप्त हुआ है मनुसंहिता - के अनुसार ऋक, यजु और साममन्त्रों को ही त्रिवृदवेद कहते हैं ।

मुण्डकोपनिषद - में ऋक आदि चार वेदों को अपरा विद्या कहा गया है। इतिहास और पुराणादि भी अपरा विद्या के अन्तर्गत आते है वेदों की नित्यता प्रमाणित करते हुए कहा जाता है कि ज्ञानरूप वेद प्रलय के समय भी ओंकार रूप में विद्यमान रहते हैं - ऐसे अनादि अनश्वर और नित्य ब्रह्मवाक्य को सृष्टि की प्रथम अवस्था में रचित विद्या कहा जाता है ।

ईश्वरकृत होने के कारण ही वेदों को अपौरूषेय कहते हैं - क्योंकि इन्हें मनुष्यकृत नहीं माना जाता । ब्रह्मस्वरूप और नित्यज्ञान का विस्तार वेदों द्वारा ही होता है - कृषि लोग वेद के पुष्टामात्र हैं । वेद नित्य है - इसलिए समाधिस्थ ऋषियों के अन्तःकरण में ही उनका प्रकाश होता है - ऋषियों को वेदों का ज्ञान प्रलयकालोपरान्त ब्रह्माजी से तपस्या द्वारा प्राप्त हुआ था ।

वेद की नित्यता इसलिये स्वीकार की जाती है कि वेद ज्ञानरूप है। वे ज्ञानरूप ईश्वर के हृदय में प्रलय दशा में स्थित रहते हैं यह निष्क्रिय दशा परमात्मा की श्वासहीन योगनिद्रा है। ईश्वर की जागृत अवस्था सृष्टि है - और निद्रावस्था प्रलय। प्रलय के उपरान्त

जब प्रलय विलीन प्राणियों का संस्कार क्रियोन्मुख होता है तब भगवान अपनी योगनिद्रा छोड़कर सृष्टि की इच्छा करते हैं - यह श्वासयुक्त सृष्टि की अवस्था उनकी सिसुज्ञा कहीं जाती है। वेद में जो भगवान की **एकोहं बहुस्यां प्रजायेय** .. इच्छा व्यक्त की गयी है - वह एकता के अनेकता की और उन्मुख होकर प्रजासृष्टि की ही इच्छा है।

मनुसंहिता में कहा गया है कि सिसृओं से परमात्मा द्वाराजल की सृष्टि हुई - यह'अप' साधारण जल नहीं हो सकता। यह वस्तुत: समष्टि संस्काररूप कारणवारि है - परमात्मा सिसज्ञा से सर्वप्रथम इन संस्कारों को उद्वृद्ध करते हैं, फिर उनमें क्रियाशक्ति का बीज आरोपित करते हैं। यह क्रियाशील परिपुष्ट होकर दैदीव्यमान सूर्य की तरह चमकती है, जिससे ब्रह्माजी की उत्पत्ति होती है - यह सृष्टि की प्रारंभिक अवस्था है। यह मनुष्य के मन और वाणी की पहुंच से बाहर यह मन और वाणी से परे ब्रह्मा जी का सूक्ष्म शरीर ज्योतिर्मय कारणवारि में क्रियाशालिनी समष्टि प्राणशक्ति के रूप में स्थित रहता है।

मुण्डकोपनिषद् के एक मंत्र की व्याख्या करते हुए जगद्गुरू शंकराचार्य ने बड़ा ही सुन्दर तर्क दर्शाया है कि - भूतयोनि ब्रह्मतपस्या से उदभ्रत है इससे मूलतत्व अन्न विकसित होता है - फिर यह अव्याकृत प्रकृति(अन्न) समापिष्ट प्राणरूप हिरण्यगर्भ को उत्पन्न करती है। यह हिरण्यगर्भ श्रुतियों के अनुसार ब्रह्मा का सूक्ष्म शरीर ही है - जिसमें सृष्टिकारिणी क्रियाशक्ति विराजमान है। इससे मन सत्य और लोक की सर्वप्रथम सृष्टि हुई ब्रह्मा के इस सूक्ष्म शरीर में सर्वप्रथम परमात्मा ने ज्ञान रूप वेद राशि का संचार किया। वेदों के अपौरूषेय बनने का यही दिव्यकारण है। वाजसनेयी ब्राह्मष्ठोपनिषद् में ब्रह्माको अन्त:करण और मुक्ति की संज्ञा दी गई है - उन्हें 'मनो महान् मतिब्रह्मा' कहा गया है। यहा मन शब्द मूलत: चित्त तथा अहंकार इन चार तत्वों से युक्त चतुर्मुख कहा गया है। यह समष्टि अन्त:करण रूपी ब्रह्म का अंश ऋषि रूपी व्यष्टि में व्याप्त रहता है। जब ऋषि तपस्या और योगसाधना के द्वारा समाधिस्थ हो जाते हैं, उसी अवस्था में उन्हें सब वेदमंत्रों का साक्षात्कार होता है। वे सूक्ष्म रूप से ब्रह्मा के साथ एकात्मा होने के कारण वेद का दर्शन करते है। प्रकृति विलास और प्रकृतिलय के अनुसार परमात्मा के तीन भाव अध्यात्म अधिदैव और अधिभूत हैं स्मृतियों के अनुसार अध्यात्म अधिदैव और अधिभूत - तीनों भावों से सम्पन्न अमृतमयी ऋत्रत ज्ञानी महात्मा के लिए ब्रह्मानन्द का आस्वादन कराती है। अत: वेद तीन अर्थो और तीन भावों से सम्पन्न है। वेद में त्रिगुण और त्रिभाव की पूर्णता है।

वेद को समझने के लिए सर्वप्रथम शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरूक्त छन्द और ज्योतिष नामक छ: शास्त्रों के अंगो का अध्ययन आवश्यक है। इसके उपरान्त वैदिक सप्तदर्शनों का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। इनमें से एक के भी अभाव में साधक का ज्ञान अपूर्ण रहेगा षडंग तथा सप्तदर्शन की तात्विक ज्ञानभूमि पर प्रतिष्ठित होकर ही मनुष्ट वेदाध्ययन का अधिकारी बन सकताहै। ज्ञानार्जन का अधिकारी होने पर उसे कर्म उपासना और ज्ञान की सहायता से अपना चित्त निर्मल करना होगा तभी वेद समझा जा सकता है।

वेदों मे ऋषि द्वन्द और देवता का उल्लेख आताहै - इसका तात्पर्य यह है कि जिस ऋषि के द्वारा जो मंत्र प्रकाशित हुआ वह उस मन्त्र का ऋषि कहा जाता है और जिन छन्दों में वे मन्त्र कहे गये हैं वे उन मन्त्रोंके छन्द कहे जाते हैं - जिस मंत्र से भगवान के जिस रूप की उपासना की जाती है वह उस मंत्र का देवता कहा जाता है - प्रत्येक वैदिक मंत्र की शक्ति अलग अलग होती है इसलिये उसके छन्द का परिज्ञान होने से उस मन्त्र की आधिभौतिक शक्ति का पता चलता है। देवता के ज्ञान से उसकी आधि दैविक शक्ति तथा ऋषि के ज्ञान से उसकी आध्यात्मिक शक्ति का पता चलता है वेद के कर्म और उपासना काण्ड के बीच इन्द्रवरूण अग्नि आदि दैवी शक्तियों का स्वर्ग आदि फलप्रदान करने के लिए सकाम साधना में आव्हान किया जाता है।

वेदों के विषयों का संक्षिप्त वर्णन

चारों वेदों के विषयों का वर्णन इस प्रकार किया जा सकता है :

१. ऋग्वेद संहिता :- इस संहिता के दस मण्डल है।

जिनमें ८५ अनुवाक और अनुवाक समूह में १०२८ सूक्त है। मण्डल अनुवाक और सुक्त वर्तमान खण्ड परिच्छेद आदि के नामान्तर हैं। ऋग्वेद के प्रथम मण्डल में २४, द्वितीय में ४, तृतीय में ५ , चतुर्थ में ५ , पंचम षष्ठ मे सत्पम में से प्रत्येक में ६, अष्टम में १० , नवम् में ७ और वशम मण्डल में १२ अनुवाक निहित है। प्रत्येक मण्डलों में सूक्तो की संख्या क्रमश: १९१, ४३,६२,५८,८७,७५,१०४,१०८,११४ और १९१ है। सूक्तों के बहुत से भेद किये हैं - यथा - महासूक्त, यह यम सूक्त क्षुद्रसूक्त, ऋषिसूक्त, छन्दसूक्त , और देवता सूक्त आदि का।

महाभाष्य में यद्यपि ऋग्वेद की २१ शाखाओं का उल्लेख है - परन्तु अब पांच शाखायें भी उपलब्ध नहीं है। ऋग्वेद के दो ब्राह्मण उपलब्ध हैं ऐतरेय और कौषीतकिया सांख्यायन। ऐतरेय ब्राह्मण में आठ पंजिकाएं, प्रत्येक पंजिकत्व में पांच अध्याय और प्रत्येक अध्याय कई काण्डों से युक्त है। ऋग्वेद के आरण्यक को ऐतरेय कहते हैं - यह पांच आरण्यकों और अठारह अध्यायों से युक्त है।

२. यजुर्वेद संहिता : इसके दो भाग हैं - शुक्ल और कृष्ण - इनमें

कृष्णयजुर्वेदसंहिता को तैत्तरिय संहिता भी कहते हैं - जिसकी चरणव्यूह के अनुसार ८६ शाखाएं थीं- महाभाष्य के अनुसार यजु की १०१ तथा मुण्डि कोपनिषद् के अनुसार १०९ शाखाएं थीं - जिनमें आज मात्र १२ शाखायें और १४ उपशाखायें ही उपलब्ध है। मंत्र ब्राह्मणात्मक कृष्ण यजुर्वेद में कुल १८००० मंत्र मिलते हैं। तैत्तरियसंहिता के कुल सात अष्टम हैं जिनमें प्रत्येक अष्टक ७-८ अध्यायों का है। अध्याय को प्रश्न और अष्टक को प्रपाठक भी कहा गया है। प्रत्येक अध्याय बहुत से अनुवाकों से युक्त है - और पूरे ग्रन्थ में अनुवाकों की संख्या ७०० है। इनमें अश्वमेघ, अग्निष्टोम, ज्योतिष्टोम, राजसूय अतिरात्र आदि यज्ञों का वर्णन है - प्रजापति एवं सोम आदि इसके देवता हैं। कृष्ण यजुःसंहिता के ब्राह्मण को तैत्तरीय ब्राह्मण तथा आरण्यक की तैत्तरीय आरण्यक कहते हैं। इसके ज्ञानकाण्ड को तैत्तिरीय उपनिषद् कहते हैं। इसके अतिरिक्त शाखाओं के अनुसार मैत्रायणीय उपनिषद्, कठोपनिषद्, श्वेताश्वतर उपनिषद् तथा नारायर्णोपनिषद् आदि का भी उल्लेख मिलता है।

शुक्ल अजुर्वेद को वाजसनेयी और माध्यन्दिनी संहिता भी कहते हैं - इसके ऋषि याज्ञवल्क्य है - इससंहिता में ४० अध्याय २९० अनुवाक और अनेक काण्ड हैं। यहाँ दर्शपौर्ण मास, अग्निष्टोम, वाजपेय, अग्निहोत्र, चातुर्मास्य पोषडशी, अश्वमेघ, पुरूषमेव आदि यज्ञो का वर्णन है - वैदिक युग के सामाजिक रीतिरिवाजों के वर्णन से युक्त इस वेद को माध्यन्दिनी शाखा में शतपथ ब्राह्मण भी सम्मिलित है। इसके दो मार्गों में कुछ १४ काण्ड है जिनमें बृहदारण्यकोप निषद भी समिल्लित है।

३) सामवेद संहिता :- सामवेद की सहस्त्र शाखाओं में से मात्र असुरायणीय, वासुरायणीय, वास्तन्तिवेय प्राउचल, ऋग्वर्णमेवा, प्राचीन योग्य, ज्ञानयोग्य राणायनीय नामों का ही उल्लेख मिलता है। राणायणीय के नव मेद इस प्रकार हैं :-

१.शाट्यायनीय २. सात्वल ३. माद्गल ४. खल्वत ५. महाखल्वल ६. लाडल ७. कौथुम ८. गौतम ९. जैमिनीय।

ये सभी शाखायें लुप्त हो गई हैं - अब केवल कौथुमी शाखा ही मिलती है। सामवेद के पूर्व और उधर दो भाग है पूर्व संहिता को छन्द आर्चिक और सप्तसाम नामो से भी अमिहिन किया गया है। इसके छः प्रपाठक है। सामवेद की उत्तर संहिता को उत्तरार्चिक या अरण्यगान भी कहा गया है। इसके ब्राह्मणभाग में आर्षेय, वेदताध्याय, अद्भुत, ताण्ड्य महाब्राह्मण सामविधान आदि आ. वर्णन है। इनमें ज्ञानकाण्ड का छन्दोग्य और केनोपनिषद् प्रमुख है-

४. अर्थववेद संहिता :- अर्थववेद की संख्या १२३० है जिसका अति न्यून अंश आजकल प्राप्त है। इसकी नौ शाखायें

१. पैप्पल २. दान्त ३. प्रदान्त ४. स्नात ५ सौल ६. ब्रह्मदावल ७. शौनक ८. दैवीदर्शनी ९.चरणविद्या में से केवल शौनक शाखा ही आज रह गयी है। इसमें २० काण्ड हैं। अथर्ववेद शत्रुपीड़न आत्मरक्षा, विपद्निवारण आदि कार्यो से भरा पड़ा है। ऐसा मालुम पड़ता है कि वर्तमान तांत्रिक साधना इसी से उद्भूत है। अथर्ववेद के ब्राह्मण का नाक गौपथ है। इसके ज्ञानकाण्ड में बहुत उपनिषदें थी और आज भी जावाल कैवल्य, आनन्दवल्ली आरूणेय, तेजौविन्दु, ध्यानविन्दु, अमृतविन्दु ब्रह्मविन्दु, नादविन्दु, प्रश्न, मण्डक, अथर्व शिरस, गर्भ माण्डूक्य नीलरूद्र आदि उपनिषदें पायी जाती हैं। अथर्ववेद के संकलन के विषय में तीन मत प्रचलित हैं - अथर्व ऋषि अंगिरा ऋषि के वंशधर एवं भृगुवंशियों द्वारा इसका संकलन किया गया है। सूंतसंहिता में लिखा है - कि महर्षि वेद व्यास ने अम्बिकापति की कृपा से वेद के चार भाग किये। मनुष्य को त्रिविधशुद्धि द्वारा मुक्ति प्रदान करने के लिए ही वेद को कर्म, उपासना और ज्ञान नामक तीन काण्डों में विभक्त किया गया है।

स्मृति के अनुसार प्रत्यक्ष या अनुमान से जो कुछ प्राप्त नहीं हो सकता वह वेद से प्राप्त हो जाता है।

लेखक - विद्यावाचस्पति डॉ. राजेशकुमार
उपाध्याय "नार्मदेय" श्रीकृष्णार्जुन सदन,
श्री राजेन्द्र टॉकीज के पीछे, शहडोल (म.प्र.)